साम्राज्यवाद का नया अर्थशास्त्र है आज का मीडिया

डॉ. हरीश अरोड़ा,
पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य),
(दिल्ली विश्वविद्यालय),
नेहरू नगर, नई दिल्ली–110065

भूमण्डलीकरण की आँधी के बीच जिस तरह से एक नयी पूँजीवादी सभ्यता ने पूरी दुनिया पर अपना आधिपत्य जमा लिया उससे दुनिया का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा। दुनिया के तमाम संसाधनों पर इस नए पूँजीवाद ने बाज़ार की शक्ल में इंसान की बुनियादी जरूरतों के साथ–साथ उसके ज्ञान और विचार के केन्द्र पर भी अपना कब्जा ज़मा लिया है। अब कला के मापदण्ड उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति में नहीं बल्कि बाज़ार में उसे बेच पा सकने की एजेंटा सैटिंग में महारथ हासिल करने में है। ऐसे में जब दुनिया के सामने इस नयी साम्राज्यावादी अर्थतंत्रात्मक शक्ति से संघर्ष कर पाने में असफलता हाथ लगने लगी और दुनिया की हर सोच इसी के इर्द–गिर्द सिमट कर रह गयी तब मीडिया इससे कैसे अछूता रह सकता था।

एक दौर था जब इंसान दुनिया की तस्वीर को मीडिया के नज़रिए से देखकर अपनी ज़िन्दगी के फलसफे को नया आकार देता था। उसकी ज़िन्दगी का समूचा ताना–बाना समाचार–पत्रें और दूरदर्शन के दिखाए गए सच के विश्वास पर बुना गया था। लेकिन वही इंसान आज बाज़ार के कब्जे में कसमसाते मीडिया के नज़रिए से ही दिखायी जा रही वर्चुअल दुनिया को ही अपनी दुनिया समझ बैठा है। वह स्वयं अपनी ज़िन्दगी की विसंगतियों में इतना उलझ चुका है कि उसे किसी ओर के विसंगति बोध से कोई सरोकार नहीं रहा। दरअसल उसकी इस स्थिति का कारण बदलता हुआ परिवेश नहीं बल्कि उस परिवेश में उसकी मानसिकता पर अपना अधिकार जमा चुका बाज़ारवाद है। जो उसने अपनी आँखों से नहीं बल्कि मीडिया के चश्में से देखकर स्वयं अपने ऊपर लाद दिया है।

दरअसल एक समय था जब पत्रकारिता को मिशन की पत्रकारिता कहा जाता था। उस दौर में 'सम्पादक' केवल एक व्यक्ति नहीं था बल्कि वह एक संस्था था। तब सामाजिक जीवन और उसकी विसंगतियों से जूझने के लिए पत्रकार की कलम किसी के द्वारा प्रायोजित नहीं होती थी। पत्रकारिता एक गम्भीर विधा थी और पत्रकार समाज का सजग प्रहरी। लेकिन बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में भूमण्डलीकरण के आगमन के चलते बाज़ारवाद ने पत्रकारिता को एक उद्योग में तब्दील कर दिया। सत्ता के दबाव के समक्ष न झुक पाने वाले मीडिया ने बाज़ार की चुनौतियों के सामने अपने घुटने टेक दिए।

यहाँ एक बात बहुत महत्त्वपूर्ण है। ऐसा नहीं है कि समाज में बाज़ार पहले से मौजूद नहीं था। लेकिन वैश्वीकरण की आँधी ने बाज़ार की अवधारणा को ही बदल दिया। पश्चिम की भोगवादी संस्कृति से उपजा यह नया बाज़ारवाद वास्तव में तीसरी दुनिया के देशों के बाज़ार पर अपना आधिपत्य जमाने का एक माध्यम बना। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण आधार बना मीडिया। पूँजीवादी शक्तियों द्वारा जब तीसरी दुनिया के देशों को अपने सामने झुकाने का प्रयास विफल रहा तो उन शक्तियों ने मीडिया के द्वारा तीसरी दुनिया के देशों पर सांस्कृतिक आक्रमण आरम्भ कर दिए। जिसके परिणामस्वरूप श्रेष्ठ संस्कृतियों को संजोए तीसरी दुनिया के देश बाज़ार के दबाव

के सामने टिक न सके और नयी पूँजी से उपजी भोगवादी संस्कृति के आकर्षण में घिर गए और इस तरह आदर्शों, सर्वश्रेष्ठ मूल्यों और व्यापक जीवनदृष्टि से आप्त भारतीय पत्रकारिता बाज़ार के एजेंडे पर चलने लगी।

दरअसल बाज़ार का अपना एक नियम है। वह वस्तुओं की माँग और उसकी आपूर्ति से संचालित होता है। जैसे–जैसे किसी वस्तु की माँग बढ़ती है वैसे–वैसे ही उसकी आपूर्ति भी बढ़ती जाती है। किसी वस्तु की माँग बढ़ने का आधार यह भी है कि वह वस्तु जितनी सस्ती होगी वह उतनी अधिक बिकेगी इस तरह माँग और आपूर्ति के सिद्धांत पर बाज़ार चलता है। इसी नियम के आधार पर ही पश्चिमी बाज़ारवाद ने भारतीय तथा तीसरी दुनिया के अन्य देशों के मीडिया पर अपना कब्जा ज़माने के लिए अपनी कुन्द पड़ चुकी तकनीक को इन देशों को बेचना आरम्भ कर दिया। सस्ती और नयी प्रौद्योगिकी के चलते मीडिया के क्षेत्र में सैंकड़ों पत्र–पत्रिकाओं, टेलीविजन चैनलों की बाढ़–सी आ गयी।

इस तरह बाज़ार ने मीडिया के क्षेत्र में प्रतियोगिता की सम्भावनाओं को जन्म दिया और सैंकड़ों पत्रकारों, सम्पादकों और प्रबन्धकों की बड़ी–सी जमात खड़ी हो गयी। लेकिन इनके सामने भी उस प्रतियोगिता के दौर में टिके रहने का सवाल था। ऐसे में सामाजिक प्रतिबद्धता और शुचिता के मूल्यों पर टिकी पत्रकारिता में समझौतावादी संस्कृति का उदय हुआ। मीडिया सामाजिक हितों की चौपाल से कॉरपोरेट घरानों की आलीशान इमारतों में कैद हो गया। सत्ता और व्यवस्था के पक्षधरों के लिए इस मीडिया को अपनी शक्ति और राजनीति की चकाचौंध–भरी दुनिया दिखाकर अपना हित साधने का बेहतर अवसर मिला और इस तरह वर्तमान में भारतीय मीडिया पूरी तरह से बाज़ार के कब्जे में आ गया।

ऐसे में पत्रकारिता का चरित्र अपनी शुचिता को बचाए रखने के लिए संघर्ष करने लगा। सम्पादक नाम की संस्था अब कॉरपोरेट घरानों के खूबसूरत चैम्बरों में बैठे मालिकों के हाथ का खिलौना बन गयी। सम्पादक की विचारणा और उसकी चेतना का स्तर जो किसी समाचार–पत्र की पहचान थे वे मालिक की पूँजीवादी विचारधारा के तले कहीं दब गए। अब पत्रकार के लिए जीवन की विडम्बनात्मक परिस्थितियों के बीच जाकर सूचना को एकत्र करना इतना अधिक मायने नहीं रखता जितना पाठकों और दर्शकों के मनोविज्ञान के अनुरूप सूचनाएं क्रिएट करना। 'पब्लिक डिमांड' के फलसफे पर चलते हुए मीडिया ने भी माँग और आपूर्ति के सिद्धांत को अपना लिया। सामाजिक जीवन की विसंगतियाँ अब मीडिया के लिए संवेदना का आधार नहीं वरन् बाज़ार में अपने को स्थापित रख पाने के अर्थशास्त्र का नया सिद्धांत बन गयीं।

लेकिन इसके लिए सिर्फ बाज़ारवाद को दोष देना ही काफी नहीं है। जिस दौर में मीडिया कॉरपोरेट घरानों में तब्दील होता जा रहा था और उसने सत्ता पर बैठे लोगों के साथ हाथ मिला लिए ऐसे में सत्ता के प्रतिपक्ष की सशक्त भूमिका न होने के कारण भी पत्रकारिता की धार धीमी पड़ गयी। कमज़ोर विपक्ष के चलते ही मीडिया के मालिकों ने सत्ता के साथ अपने समझौते की बिसात पर समूची पत्रकारिता को ही बाज़ार के हाथों बेच दिया। और इस तरह सम्पादक नाम की संस्था केवल एक व्यवस्था का हिस्सा बनकर रह गयी। यदि यही स्थिति रही तो आने वाले समय में सम्पादक नाम की संस्था मीडिया से समाप्त हो जाएगी और ब्रांड मैनेजर जैसे लोगों के हाथों से पत्रकारिता संचालित होगी। लेकिन भारतीय पत्रकारिता का यह नया दौर जो बाज़ार द्वारा संचालित हो रहा है, इसमे अब भी अपने पत्रकारिता धर्म का निर्वाह करने वालों की कमी नहीं है। बाज़ार ने जिस तेज़ी से मीडिया पर

अपना कब्जा जमाया है वक्त के साथ मीडिया भी अपनी सोच और समझ के साथ इस बाज़ार से बाहर निकलकर फिर से एक नयी दुनिया की तरफ जाएगा। जहाँ फराने सपनों के साथ चलना भले ही कठिन हो लेकिन नए सपनों की यह दुनिया पुराने मूल्यों को संजोए परम्परागत पत्रकारिता की पवित्रता को बरकरार रखेगी।

संदर्भ

1. षर्मा, कुमुद़ भूमण्डलीकरण और मीडिया, नई दिल्ली
2. पचौरी, सुधीष, उत्तर आधुनिक मीडिया विमर्ष, नई दिल्ली
3. चतुर्वेदी, जगदीष्वरऋ टेलीविज़न संस्कृति और राजनीति, अनामिका प्रकाषन, नई दिल्ली
4. पर्किंग, जॉऩ कन्फेषन्स ऑफ इन इकनॉमिक हिटमैन, नई दिल्ली

Copyright © 2015. Dr. Harish Arora. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.